



INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF HUMANITIES AND INTERDISCIPLINARY STUDIES

(Peer-reviewed, Refereed, Indexed & Open Access Journal)

DOI : 03.2021-11278686

ISSN : 2582-8568

IMPACT FACTOR : 7.560 (SJIF 2024)

गीता में सांख्य योग और वर्तमान शैक्षिक प्रक्रिया (Sankhya Yoga In Geeta and Current Teaching Process)

डॉ अरुण कुमार मिश्रा

असिस्टेंट प्रोफेसर,
मधुस्थली इन्स्टिट्यूट ऑफ टीचर ट्रेनिंग,
सलैया, मधुपुर, देवघर, झारखण्ड

E-mail: aarun1972Anpara@rediffmail.com

DOI No. 03.2021-11278686

DOI Link :: <https://doi-ds.org/doilink/03.2024-72157573/IRJHIS2403002>

शोध सार —

विद्यार्थी जीवन में अपने बुद्धि को स्थिर करने के लिए उसे इंद्रियों पर नियंत्रण करना होगा, क्योंकि अस्थिर बुद्धि भ्रम पैदा करती है और भ्रम मानव को अपने उद्देश्यों से विचलित कर देता है और वह अपने उद्देश्य की प्राप्ति में सफल नहीं हो सकता है। अतः विद्यार्थी को विवेकशील बनना चाहिए।

मुख्य शब्द — स्थितप्रज्ञ, स्थिरबुद्धि, इंद्रिय निग्रह, अस्थिर बुद्धि, श्रेयस—प्रेयस, विवेक, श्रवण—मनन निदिध्यासन।

प्रस्तावना —

जैसा की गीता के विषय में कहा गया है की जो गीता में है वह सर्वत्र है और जो गीता में वर्णित नहीं है वह कही भी नहीं है। इस कथन के परिप्रेक्ष्य में देखे तो हम यह पाते हैं की जो कुछ हम पाश्चात्य अनुकरण के रूप में अपना रहे हैं वह सभी कुछ हमारे ग्रंथों में पूर्व में वर्णित है इस हेतु हम गीता के द्वितीय अध्याय में सांख्य योग में वर्णित स्थितप्रज्ञ की स्थिति और वर्तमान शैक्षिक प्रक्रिया का तुलनात्मक अध्ययन करेंगे। इसके माध्यम से हम यह जानने में समर्थ हो सकेंगे की कैसे एक अपने विद्यार्थी जीवन में अपने उद्देश्यों को प्राप्त कर सकता है और उद्देश्यों की प्राप्ति में बाधाएं कैसी आएँगी और उन बाधाओं से मुक्ति कैसे मिल सकती है।

उद्देश्य —

- गीता में वर्णित शैक्षिक प्रक्रिया को जानना
- गीता में वर्णित स्थितप्रज्ञ के अवस्था को जानना
- गीता में वर्णित ध्यानाकर्षण के महत्त्व को जानना

- गीता में वर्णित इंद्रिय निग्रह को जानना
- गीता में वर्णित विवेक के महत्त्व को जानना
- ज्ञान की प्राप्ति हेतु कर्म करना या मनोगत्यात्मकता के महत्त्व को जानना
- थोड़े से ज्ञान की प्राप्ति पर न रुकना, क्योंकि ज्ञान सीमा विहीन है

शोध विषय वस्तु —

गीता के अध्याय दो के अंतर्गत श्लोक संख्या ५५ से ७२ की व्याख्या यदि हम आज के शैक्षणिक परिप्रेक्ष्य के रूप में करें तो हम स्थितप्रज्ञ की स्थिति क्या है और एक स्थितप्रज्ञ विद्यार्थी को किन- किन बिन्दुओं को ध्यान में रखना चाहिए इसका विस्तृत वर्णन है, जो निम्नवत है।

प्रजहाति यदा कामान्सर्वान्पार्थ मनोगतान् ।

आत्मन्येवात्मना तुष्टः स्थितप्रज्ञस्तदोच्यते ॥ ५५॥

- मन व इंद्रियों के निग्रह के साथ बुद्धि की स्थिरता जरूरी है। क्योंकि इंद्रियों के निग्रह से हम केवल वाह्य रूप से स्थिरता प्राप्त करते हैं जबकि बुद्धि की स्थिरता से ही हम अपने उद्देश्य की प्राप्ति कर सकते हैं। (अध्याय २ श्लोक — ५५)

दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्मृहः।

वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते ॥ ५६॥

- स्थिर बुद्धि हेतु स्वयं को राग, भय, क्रोध, सफलता, असफलता, आदि से परे होना होगा क्योंकि यदि जीत के मद में रुके तो पुनः नीचे गिरेंगे और असफलता से डिगे तो पुनः कभी उठ नहीं सकेंगे। (अध्याय २ श्लोक — ५६)

यः सर्वत्रानभिस्नेहस्तत्तत्प्राप्य शुभाशुभम् ।

नाभिनन्दति न द्वेष्टि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥ ५७॥

- एक आदर्श विद्यार्थी में क्या गुण होने चाहिए तो इसका वर्णन इस श्लोक के माध्यम से हम समझ सकते हैं कि जब विद्यार्थी किसी समस्या के हल में प्रसन्न ना हो और समस्या में घिरने पर घबराये न वही एक आदर्श विद्यार्थी है। क्योंकि यदि वह ज्यादा प्रसन्न हुआ तो आगे उसके गलती करने की सम्भावना उत्पन्न हो सकती है और यदि वह घबराया तो उसके आगे बढ़ने की सम्भावना धूमिल हो सकती है अतः एक आदर्श विद्यार्थी शुभा शुभ अर्थात् दोनों अवस्था (हल होना— हल न होना) में साम्य की अवस्था में होता है। (अध्याय २ श्लोक — ५७)

यदा संहरते चायं कूर्मोऽङ्गनीव सर्वशः ।

इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥ ५८॥

- एक सर्वोत्कृष्ट विद्यार्थी के गुण कैसे होते हैं इसका अन्वय हम इस श्लोक में कर सकते हैं। तो इस श्लोक में सर्वोत्कृष्ट विद्यार्थी एक कछुआ की तरह होना चाहिए जो वाह्य वातावरण के प्रभाव से अपने आप को अछूता रखता है। ऐसे ही यदि विद्यार्थी भी वाह्य वातावरण से अपने ऊपर कोई प्रभाव यदि ना पड़ने दे तो वह अपनी समस्त ऊर्जा को किसी एक बिन्दु (अपनी समस्या के समाधान) पर लगा कर उससे आसानी से हल प्राप्त कर सकता है क्योंकि जब उसकी बुद्धि वाह्य वातावरण से अप्रभावित होगी तो स्थिर होगी वह एकाग्रचित्त होगा तभी वह विषय का विश्लेषण — संश्लेषण आदि के माध्यम से अपनी समस्या का हल प्राप्त कर सकता है अर्थात् विद्यार्थी को अपनी समस्त इन्द्रियों के वशीभूत ना होकर उसे परिभूत करना चाहिए यही सर्वोत्कृष्ट विद्यार्थी के लक्षण हैं। (अध्याय २ श्लोक —५८)

विषया विनिवर्तन्ते निराहारस्य देहिनः।

रसवर्जं रसोऽप्यस्य परं दृष्ट्वा निवर्तते ॥५९॥

यततो ह्यपि कौन्तेय पुरुषस्य विपश्चितः ।

इन्द्रियाणि प्रमाथीनि हरन्ति प्रसभं मनः ॥ ६० ॥

- स्थिर बुद्धि हेतु विद्यार्थियों को निर्लिप्तता का भाव सीखना होगा अर्थात् इसके प्राप्ति पर विवेक नष्ट ना हो अर्थात् जब सफलता मिले तो भी विवेक जागृत रहेगी क्योंकि विवेक ही हमें श्रेयस व प्रेयस में विभेद सिखाता है । जिस दिन विद्यार्थी विवेकहीन हो गया उस दिन वह स्वयं लक्ष्य से भटक जायेगा। (अध्याय २ श्लोक —५९—६०)

तानि सर्वाणि संयम्य युक्त आसीत मत्परः ।

वशे हि यस्येन्द्रियाणि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥ ६१ ॥

- इंद्रियजन्य ज्ञान सत्य नहीं होता है । स्थिर बुद्धि वाला व्यक्ति विवेकशील होने के कारण वह विवेक से उसके सत्य असत्य होने का भान कर लेता है। (अध्याय २ श्लोक —६१)

ध्यायतो विषयान्मुंसः संगस्तेषूपजायते ।

संगात्संजायते कामः कामात्क्रोधोऽभिजायते ॥ ६२ ॥

क्रोधाद्भवति सम्मोहः सम्मोहात्स्मृतिविभ्रमः ।

स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति ॥ ६३ ॥

- यदि मनुष्य विषयों अर्थात् इंद्रियों का चिंतन करेगा तो उसकी बुद्धि भ्रष्ट होगी और इससे मानव का पतन होगा , अर्थात् नीचे की ओर जाने लगता है। (अध्याय २ श्लोक —६२—६३)

रागद्वेषवियुक्तैस्तु विषयानिन्द्रियैश्चरन् ।

आत्मवश्यैर्विधेयात्मा प्रसादमधिगच्छति ॥ ६४ ॥

- अंतःकरण (मन + बुद्धि + चित्त + अहंकार) इन चारों का योग होता है। जब व्यक्ति इन चारों पर विजय प्राप्त कर लेता है अर्थात् ये साधक अर्थात् व्यक्ति के वश में हो जाते हैं। और व्यक्ति इन्द्रिय जनित ज्ञान में भी अंतःकरण की प्रसन्नता को प्राप्त करता है कहने का भावार्थ है की इन्द्रिय जन्य ज्ञान सत्य नहीं होता दूसरे जब आप अन्तःकरण पर विजय प्राप्त कर लेते हैं जो उस अवस्था को कहते हैं जब आप (मन+ बुद्धि+ चित्त — अहंकार) की अवस्था को प्राप्त कर लेते हैं तो आप अपने आप को प्रसन्नता की अवस्था में प्राप्त करेंगे। अतः विद्यार्थी को अपने मन, बुद्धि, चित्त पर नियंत्रण करते हुए अहंकार को दूर करना चाहिए तब वह अपने आप को अपने लक्ष्य पर केंद्रित करने में समर्थ हो सकेगा । (अध्याय २ श्लोक —६४)

प्रसादे सर्वदुःखानां हानिरस्योपजायते ।

प्रसन्नचेतसो ह्याशु बुद्धिः पर्यवतिष्ठते ॥ ६५ ॥

- जब अंतःकरण में प्रसन्नता आएगी (कब आएगी , कैसे आएगी इसका वर्णन पूर्व के अन्वय में किया जा चुका है) तो दुख अर्थात् उस लक्ष्य या विषय वस्तु से जिसका ज्ञान आपको नहीं है अर्थात् जिसके कारण अज्ञानता है वो दूर हो सकेगा। और इस प्रसन्नता के कारण ही व्यक्ति की बुद्धि स्थिर हो सकेगी अर्थात् एकाग्र हो सकेगी तभी व्यक्ति उस विषय वस्तु सम्बन्धी विशेष ज्ञान की प्राप्ति कर सकेगा।

अतः विद्यार्थी को एकाग्रचित्त होने के लिए अन्तःकरण पर विजय प्राप्त करनी होगी।

(अध्याय २ श्लोक —६५)

नास्ति बुद्धिरयुक्तस्य न चायुक्तस्य भावना ।

न चाभावयतः शान्तिरशान्तस्य कुतः सुखम् ॥ ६६ ॥

- विद्यार्थियों का विभ्रम कैसे दूर हो इसके लिए भी विवेक जागृत करना होगा और बिना विवेक जागृत के शांति नहीं मिलेगी। (अध्याय २ श्लोक —६६)

इन्द्रियाणां हि चरतां यन्मनोऽनुविधीयते ।

तदस्य हरति प्रज्ञां वायुर्नाविमिबाम्भसि ॥ ६७ ॥

- केवल एक इंद्रिय पर ही नियंत्रण नहीं करना है वरन सभी पर आवश्यक है इसलिए ही प्राचीन समय में श्रवण , मनन , निदिध्यासन की बात कही गयी है जो इसका आचरण करेगा वह विवेकशील प्राणी है स्थिर बुद्धि वाला है । (अध्याय २ श्लोक —६७)

निष्कर्ष —

स्थितप्रज्ञ या स्थिरबुद्धि या चित्त का होने हेतु विद्यार्थियों को अपने शैक्षणिक जीवन में इंद्रियों पर पूर्ण नियंत्रण स्थापित करते हुए अपनी बुद्धि में विवेक को लाना होगा क्योंकि बिना विवेक के सत्य—असत्य, श्रेयस प्रेयस का उसे भान नहीं होगा यदि उसे इसका भान नहीं होगा तो वह अपने जीवन में उर्ध्वगामी के स्थान पर अधोगामी बन जायेगा अर्थात् नीचे चला जायेगा। अतः हम कह सकते हैं कि छात्र के विद्यार्थी जीवन में विवेक का बड़ा महत्त्व है

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची —

1. श्रीमद्भागवत गीता
2. गीता प्रबोधनी — राम सुखदास स्वामी जी
3. शिक्षा के दार्शनिक पृष्ठभूमि — ओड लक्ष्मीलाल के
4. शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय पृष्ठभूमि — पाण्डेय राम सकल

